क़ुरबानी की वास्तविकता

जमाअत इस्लामी हिन्द

दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, नई दिल्ली-110025

+91-9810032508, 9650022638

www.islamic-videos.com

www.islamsabkeliye.com

www.facebook.com/truepathoflife

ईश्वर, अति दयावान, अत्यंत कृपाशील के नाम से

कुरबानी की वास्तविकता

ईद–उल–अज़हा, जिसको बक़रीद भी कहते हैं, मुसलमानों के दो प्रमुख त्योहारों में से एक है, जो इस्लामी कैलेंडर के आखिरी महीने, जुलहिज्जा के 10वें दिन मनाया जाता है। ईद–उल–अज़हा या 'कुरबानी का त्योहार' पैग़म्बर हज़रत इब्राहीम का अल्लाह के आदेश के समक्ष स्वयं को पूर्ण रूप से समर्पित कर देने और अपने बेटे को अपने ही हाथों कुरबान कर देने पर तैयार हो जाने की याद का प्रतीक है। इस दिन एक जानवर को अल्लाह के नाम पर कुरबान कर हर मुसलमान अपने इसी संकल्प को दर्शाता है की हज़रत इब्राहीम की तरह वह और उसका सबकुछ अल्लाह को समर्पित है। विश्वभर में फैले 200 करोड़ मुसलमान इस त्योहार को पूरी श्रद्धा से मनाते हैं और अल्लाह के आदेशों के समक्ष अपने पूर्ण समर्पण के प्रदर्शन में प्रतीकवश एक जानवर की कुर्बानी पेश करते हैं।

कुरबानी अन्य धर्मों में

अपने अराध्य के सामने जानवरों को कुरबान करने की प्रथा किसी–न–किसी रूप में विभिन्न धर्मों में पाई जाती रही है। प्राचीन ग्रीस, मिस्र, चीन और रोमन सभ्यता और स्वयं हमारे देश में जानवरों के बलि चढ़ाने की प्रथा मिलती है। बलि प्रथा के अंतर्गत बकरा, मुर्गा या भैंसे की बलि दिए जाने का प्रचलन है। यहूदी और ईसाइओं के यहाँ भी जानवरों की कुरबानी किए जाने का वर्णन मिलता है। हिन्दू धर्म में इस सम्बन्ध में अधिक जानकारी के लिए कृपया देखें– मनु०–3/123, 3/268, 5/23, 5/27–28, 5/35–36; ऋ०–10/27/2, 10/28/3; अथर्व०–9/6/4/43/8; श०ब्रा०–3/1/2/21

कुरबानी का इतिहास

इस्लाम में कुरबानी को इबादत (उपासना) माना जाता है और अब से 4500 वर्ष पूर्व हज़रत इब्राहीम द्वारा स्थापित परम्परा के पालन में सारी दुनिया के मुसलमान ईद–उल–अज़हा के दिन जानवर की कुर्बानी करते हैं। इंसानों के मार्गदर्शन के लिए अल्लाह समय समय पर विभिन्न स्थानों पर अपने पैग़म्बर भेजता रहा है। सबसे पहले पैग़म्बर हज़रत आदम थे और उन्ही से मानवता का आरंभ भी हुआ। हज़रत मुहम्मद आख़िरी पैग़म्बर थे जो अब से लगभग 1500 वर्ष पूर्व मक्का में भेजे गए थे। हज़रत इब्राहीम को अल्लाह ने इराक़ में भेजा और उन्होंने सारी दुनिया के इंसानों को एक ईश्वर की उपासना की ओर बुलाया। यही कारण है की हज़रत इब्राहीम को सभी धर्मों में बड़े आदर का स्थान प्राप्त है।

अल्लाह का यह तरीका रहा है की वह अपने नेक बन्दों के प्रशिक्षण और उनमें मज़बूती पैदा करने के लिए उनको विभिन्न प्रकार के परीक्षणों से गुज़रता रहता है। हज़रत इब्राहीम को अपने जीवन में ऐसे अनेकों परीक्षणों से गुज़ारना पड़ा। उनका सबसे कठिन परीक्षण तब हुआ जब उन्होंने स्वप्न देखा की वह अपने बेटे हज़रत इस्माईल को कुर्बान कर रहे हैं। हज़रत इब्राहीम ने इसे अल्लाह का आदेश माना और अपने बेटे की स्वीकृति के साथ उन्हें कुरबान करना चाहा, परन्तु अल्लाह ने उन्हें रोक दिया और कहा कि बस तुम्हारी परीक्षा लेना उद्देश्य था जिसमें तुम पास हो गए। अल्लाह ने उसकी जगह एक जानवर की कुरबानी करने का आदेश दिया। इस प्रकार उन्होंने और उनके बेटे ने यह साबित कर दिया की उनका पूरा जीवन अल्लाह के लिए समर्पित है।

इस्लाम का तो उद्देश्य यही है की वह समस्त इंसानों को स्वयं को अपने वास्तविक मालिक अल्लाह के समक्ष पूर्ण रूप से समर्पित कर देंने का आह्वान करे। जो लोग इस आह्वान को स्वीकार कर लेते हैं वह मुसलमान कहलाते हैं और अपने इसी समर्पण की अभिव्यक्ति के लिए दुनिया के सारे मुसलमान हर साल ईद–उल–अज़हा के दिन हज़रत इब्राहीम द्वारा दी गई इस कुरबानी को मनाते हैं।

हज़रत इब्राहीम के बाद आने वाले सभी पैग़म्बर और उनके अनुयायी कुरबानी की इस प्रथा को आगे बढ़ाते रहे। आख़िरी पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद ने भी इस प्रथा को जारी रखा और सदा के लिए मुसलमानों के समक्ष यह आदर्श छोड़ गए की वह भी हर साल इस प्रथा को जारी रखें। यही कारण है की समस्त मुसलमान उनका अनुसरण करते हुए इस प्रथा को जारी रखे हुए हैं।

कुरबानी के फाएदे

कुछ लोग समझते हैं कि जानवर की कुरबानी एक प्रकार की बलि है जिसमें जानवर को ज़बह करके उसके मास और खाल को नष्ट कर दिया जाता है। कुरबानी का यह मतलब हरगिज़ नहीं है, बल्कि उसकी एक–एक चीज़ को काम में लाया जाता है और नष्ट और बर्बाद नहीं किया जाता। इस दृष्टि से यदि कुरबानी का जाएज़ा लिया जाए तो इसके अनगिनत फाएदे सामने आते हैं।

आर्थिक लाभः एक छोटे से जानवर की कुरबानी अपने अन्दर ढेरों आर्थिक लाभ रखती है जो देश और समाज की अर्थव्यवस्था का पहिया घुमाते रखने में बड़ी भूमिका निभाती है।

- इसका सबसे बड़ा लाभ पशु उद्योग को पहुँचता है। अनुमान है कि भारत में प्रति वर्ष ईद–उल–अज़हा के अवसर पर एक करोड़ से अधिक जानवरों की कुरबानी होती है। यह जानवर किसी इंडस्ट्री से नहीं, बल्कि गाँव में रहनेवाले ग़रीबों के घरों से आते हैं

और कितने ही घर ऐसे हैं जिन्होंने इसे ही अपने जीवन–यापन का साधन बना रखा है।

- कुरबानी के महंगे जानवर ख़रीदने वाले धनवान लोग ही होते हैं। इस प्रकार उनके पास की दौलत को ग़रीबों तक पहुँचाने का यह एक वार्षिक कार्यक्रम है जो देश की अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ाने में सहायक होता है।
- देश का अरबों रुपयों का चमड़ा उद्योग इन्हीं जानवरों से निकलने वाली खालों पर ही पूरी तरह निर्भर है। अगर कुरबानी प्रथा न होती तो पैरों में पहने जाने वाले जूते–चप्पल, फ़ौजियों के काम आनेवाली लेदर जैकेट्स आदि के लाले पड़ जाते।
- ब्रिटेन के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री जॉन मेनार्ड कीन्स के सिद्धान्त पर यदि कुरबानी से होने वाले आर्थिक लाभ को मापा जाए तो आसानी से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है की जानवरों की कुरबानी एक बहुत बड़ा इन्वेस्टमेंट मल्टीप्लायर (Investment Multiplier) यानी दिन दूनी और रात चौगुनी तरक्की करने वाला है।

समाजी लाभः आर्थिक लाभ के साथ ही कुरबानी के बहुत सारे समाजी लाभ भी हैं।

- सदा से मुसलमानों का यह तरीका रहा है की वह कुरबानी से प्राप्त होने वाले गोश्त का दो–तिहाई ग़रीबों में बाँट देते हैं। थोड़ा सा गौर करने से आसानी से यह बात समझ में आ जाती है कि ग़रीबों को फ़ायदा पहुंचाने और उनकी सहायता करने का इससे बड़ा कोई त्योहार दुनिया में नहीं है। कुरबानी के गोश्त का व्यापार नहीं किया जा सकता और न ही सारा–का–सारा स्वयं ही इस्तेमाल किया जा सकता है। कुरबानी के अवसर पर ऐसे ग़रीब और भूखों को भी भोजन मिल जाता है जिन्हें आम दिनों में मिलना मुश्किल या असंभव होता।
- इस्लाम सदा एक ऐसा समाज बनाना चाहता है जिसमें अमीर ग़रीबों से कटकर नहीं, बल्कि उनके काम आने का प्रयत्न करें। ईद–उल–अज़्हा का यह त्योहार अमीर और ग़रीब के बीच की दूरी को बहुत हद तक मिटा देता है जब गोश्त लेकर वह ग़रीबों के दरवाज़े पर जाता है।
- ईद का दिन रिश्तेदारों और पड़ोसिओं से अपने सम्बन्ध के नवीनीकरण का दिन होता है। इस दिन मात्र अल्लाह की खुशी के लिए ही सही आदमी अपने नाराज़ रिश्तेदारों और पडोसिओं को भी गले लगा लेता है। इस प्रकार सम्बन्ध सुधारने और उनमें मधुरता पैदा करने का एक अच्छा अवसर मिल जाता है।

अध्यात्मिक फ़ायदेः इस्लाम के दोनों त्योहार, ईद–उल–फ़ित्र और ईद–उल–अज़्हा लोगों में आध्यात्मिकता पैदा करने में

बड़ा रोल निभाते हैं।

- दोनों ईद में खुशी मनाने का आरम्भ नमाज़ से होता है जो अपने मालिक और पालनहार से सम्बन्ध स्थापित और मज़बूत करने का सबसे कारगर तरीका है। हज़ारों, लाखों मुसलमान एक साथ एक आवाज़ पर अपने मालिक के सामने अपना सर ज़मीन पर रख देते हैं। उस समय अपने मालिक से जितना करीब वे होते हैं किसी और समय नहीं होते।
- कुरबानी तो नाम ही अपने मालिक का हुक्म बजा लाने का है। इससे बड़ी आध्यात्मिकता क्या होगी की आदमी अपने मालिक के एक इशारे पर अपना सबकुछ, यहाँ तक की अपना जी–जान भी, कुरबान करने को तैयार हो जाए?
- इस्लाम आध्यात्मिकता को 'तक़वा' (ईशपरायणता) का नाम देता है और कुरबानी इंसानों में यही तक़वा पैदा करती है। कुरबानी के समय पढ़ी जानेवाली दुआ आध्यामिकता की सच्ची भावना को व्यक्त करती है: **"बेशक मेरी नमाज़ और मेरी कुरबानी और मेरा जीना और मेरा मरना सिर्फ़ सब लोकों के पालनहार परमेश्वर के लिए होगा।"**

कुरबानी के सम्बन्ध में ग़लतफ़हमियाँ

यह त्योहार जितना पवित्र और उच्च आदर्शों का प्रतीक है, वहीं इसको लेकर लोगों में बहुत सारी ग़लतफ़हमियाँ भी फैल गई हैं और कुछ लोग इस पर ऐतराज़ भी करने लगे हैं। आइए इनमें से कुछ को समझने का प्रयत्न करते हैं।

कुरबानी जीव–हत्या है: मांस खाने की प्रथा विश्व के लगभग सभी देशों में पाई जाती है और भोजन के लिए प्रतिदिन लाखों की संख्या में जानवर काटे जाते हैं। अगर ईद–उल–अज़हा की कुरबानी जीव–हत्या है और ग़लत है तो पूरे वर्ष जानवरों का काटा जाना उचित कैसे हो सकता है? दूसरी बात यह की विश्व की जनसँख्या का तीन–चौथाई (3/4) हिस्सा मुसलमान नहीं है और इनमें से अधिकतर लोग, जिसमें भारत के लोग भी शामिल है, मासाहार करते हैं और हमेशा से करते आ रहे हैं। भारत में 70: लोग मास खाते हैं जिनमें 50: लोग ग़ैर–मुस्लिम ही हैं। तो फ़िर जीव–हत्या का इल्ज़ाम सिर्फ़ मुसलमानों पर ही क्यों, जबकि इस्लाम अकारण किसी भी हत्या का सख्त विरोधी है, चाहे इंसानों की हो या जानवर की?

इस्लाम के बारे में एक ग़लतफ़हमी यह फ़ैली हुई है कि इसमें मास खाना अनिवार्य है। ऐसा बिलकुल नहीं है। अल्लाह ने इंसानों को उन्हीं के फ़ायदे के लिए मास खाने की मात्र अनुमति दी है, अनिवार्य नहीं किया है। इसी कारण उसने इंसान के शरीर में दोनों प्रकार की क्षमता रखी है और इसका महत्व उन लोगों से पूछिए जो ऐसे बर्फ़ीले स्थानों में रहते हैं जहाँ घास तक नहीं उगती, किसी और वनस्पति का तो प्रश्न ही नहीं उठता। और उन लोगों से पूछिए जो समुद्री इलाक़ों में

रहते हैं और मछली ही उनका मुख्य भोजन है।

इस्लाम का मानना है की समस्त जीवन का मालिक अल्लाह है और उसे यह पूर्ण अधिकार है की वह खानपान में इंसानों का मार्गदर्शन करे। इसलिए अगर इंसानों को, जिन्हें इस पृथ्वी पर उसने सबसे सर्वश्रेष्ठ प्राणी बनाया है, को वह अनुमति देता है की वह उसी के दिए हुए जीवन को कुछ विशेष अवसरों पर कुर्बान कर सकता है तो इसपर किसी को आपत्ति करना उचित नहीं मालूम होता। और यदि जीवन की बात ही की जाए तो जीवन तो वनस्पतिओं में भी होता है पर इसके भोजन के लिए उपयोग पर किसी को कोई आपत्ति नहीं होती।

यह बात भी बहुत कम लोगों को मालूम है की एक ओर जहाँ इस्लाम मास खाने की अनुमति देता है, वहीं दूसरी ओर वह यह भी आज्ञा देता है की जानवरों को इस तरह से ज़बह किया जाए की उन्हें कम से कम तकलीफ हो। पैग़म्बर मुहम्मद का आदेश है कि, **"जानवरों को ज़बह करते समय, भली तरह से ज़बह करो और अपने चाकू को तेज़ कर लिया करो और सुकून से कुरबानी करो।" (हदीसः मुस्लिम 5167)**

देखा यह जा रहा है की वर्तमान में जो लोग पूरी दुनिया में हो रही इंसानों की हत्याओं पर कभी आवाज़ नहीं उठाते, वही कुरबानी का सबसे ज़्यादा विरोध करते हैं।

कुरबानी से जानवरों की नस्ल समाप्त हो जाएगीः यह भी एक ऐसा ऐतराज़ है जिसके पीछे न कोई तर्क है न अनुभव। जानवरों का खाने में उपयोग सदा से होता आ रहा है और लाखों वर्षों में जब कुरबानी–वाले जानवरों की नस्ल समाप्त नहीं हुई तो अब कैसे हो जाएगी? बल्कि सच्चाई तो यह है की जैसे–जैसे इन जानवरों का उपयोग बढ़ता गया है वैसे–वैसे इनकी नस्ल और तेज़ी से फैलती गई है और समाप्त होने के बजाए बढती जा रही है। बकरी इसका सबसे अच्छा उदहारण है जो की लाखों की संख्या में रोज़ इस्तेमाल में आती है पर उसकी कमी कभी नहीं हुई। हालाँकि बकरी के एक साल में ज़्यादा–से–ज़्यादा दो बच्चे होते हैं जबकि कई दूसरे जानवर, जैसे कुत्ता, बिल्ली आदि, के छः और आठ तक बच्चे होते हैं पर उनकी मात्रा इतनी कभी नहीं देखने में आती जितनी बकरी की। इसी प्रकार मुर्गे और मछली की संख्या उपयोग के साथ बहुत तेज़ी से बढती जा रही है।

इस दुनिया को चलाने–वाले इन्सान नहीं, ईश्वर है और वह हर चीज़ में आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन करता रहता है। उसने इस दुनिया को चलाने का अपना एक तरीका बता दिया हैः **"तुम जिस चीज़ को जितना ख़र्च करोगे, अल्लाह उसे उतना ही बढाता जायेगा" (कुरआन 34:39)**। इसलिए यह कहना की

कुरबानी से जानवर ख़त्म हो जायेंगे एक प्रकार से ईश्वर के अस्तित्व का ही इनकार है।

कुरबानी के पैसों को ग़रीबों में बाँट देना चाहिए: ग़रीबों और समाज के अन्य वंचित लोगों की समस्याओं को दूर करने और उनके जीवन के स्तर को ऊपर उठाने का इस्लाम में भरपूर प्रावधान है और जब कभी इस्लाम को स्वतंत्र रूप से कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ है, ऐसे लोगों की संख्या में तेज़ी से कमी आई है। पूरा इस्लामी इतिहास इस पर साक्षी है। इसलिए इस्लाम पर यह आरोप भी उचित मालूम नहीं होता।

इस्लाम के दोनों त्योहार भी अपने अन्दर ग़रीबों को साथ लेकर चलने का पूरा प्रावधान रखते हैं। ईद–उल–फ़ित्र के दिन एक मुसलमान की नमाज़ स्वीकार नहीं होगी यदि उसने ग़रीबों का हक़ उन तक नहीं पहुँचाया। कुरबानी के जानवरों का दो–तिहाई हिस्सा ग़रीबों में वितरित कर दिया जाता है जिससे की उन्हें भी अच्छा आहार प्राप्त हो सके। जानवर की खाल के पैसे भी ग़रीबों को देना ज़रूरी है। और सबसे बढ़कर इस्लाम में ज़कात की अनिवार्यता स्वयं में ग़रीबी को जड़ से समाप्त करने का सबसे बड़ा प्रावधान है। आज भी यदि अनुशासित रूप से ज़कात के प्रावधान को सबपर लागू किया जाए तो देश से ग़रीबी समाप्त होने में बहुत अधिक समय नहीं लगेगा। ऐसे में एक त्योहार को चुनकर उसमें की जानी वाली कुरबानी को आलोचना का पात्र बनाना समझ से परे है।

और यदि देश में ग़रीबों के उत्थान के लिए कुछ चीज़ों को बंद ही करना है तो फ़िर हर तरफ़ हो रही पैसों की बर्बादी को भी रोका जाना चाहिए। शादी के अवसर पर की जाने वाली फ़िज़ूलखर्ची को रोका जाए, बड़े–बड़े समारोहों में होने–वाले पैसे के दुरूपयोग को रोका जाए, बड़े–बड़े आलीशान घर बनाने पर पाबन्दी लगे, लम्बी लम्बी महंगी गाड़ियों पर रोक लगाई जाए आदि। कुरबानी तो एक इबादत है और इसको इसी रूप में देखा जाए तो इस सम्बन्ध में होने वाली ग़लतफ़हमियाँ रोकी जा सकती हैं। यह तथ्य भी सामने रहे कि अगर कुरबानी को बन्द करके इस भरोसे रहा जाएगा कि लोग ग़रीबों को देंगे तो यह अव्यावाहरिक एवं काल्पनिक बात होगी जिस से अंततः नुक़सान ग़रीबों का ही होगा कि न उन्हें भोजन मिलेगा और न पैसा।

जानवरों को भी जीने का अधिकार है, जैसे इंसान को: जानवरों के जीने के अधिकार पर इस्लाम ने बहुत ज़ोर दिया है। कुरआन में अल्लाह ने बताया है की इंसानों की तरह जानवरों, पक्षिओं आदि के भी अपने गिरोह होते हैं (कुरआन 6:38) और वह भी अल्लाह का गुणगान करते हैं पर इंसानों को इसका ज्ञान नहीं है (कुरआन

24:41)। इस्लाम सिखाता है की इस पृथ्वी पर इंसानों की तरह उन्हें भी जीने का अधिकार है (कुरआन 55:10)।

यही कारण है की इस्लाम अनावश्यक रूप से या मात्र अपने शौक अथवा खेल के लिए किसी भी जानवर या अन्य जीव–जन्तु की जान लेने से मना करता है और उनपर किसी भी प्रकार के अत्याचार से रोकता है। इस्लाम का मानना है की सभी जीवन अल्लाह की ओर से हैं और सभी की रक्षा होनी चाहिए। अल्लाह ने इन सभी के जीवन को एक दुसरे पर आश्रित कर रखा है। ज़मीन पर रेंगने वाले जीव अपने भोजन के लिए कीड़े–मकोड़ों का उपयोग करते हैं, पक्षी भी कीड़े–मकोड़े खाकर ही अपना जीवन चलाते हैं और जंगल के बड़े जानवर अपने से छोटे और कमज़ोर जानवर को अपने भोजन के लिए शिकार करते हैं। यह ईश्वरीय नियम है और इसी के अन्तर्गत इन सब का अस्तित्व बाक़ी है। भोजन के लिए उपयोग में लाये जाने वाले इन सब जीव–जन्तुओं को क्या जीने का हक़ नहीं है? अवश्य है, पर इन सब का जीवन एक दूसरे के लिए ही बना है और इसमें कोई किसी पर जुल्म नहीं कर रहा है। इस धरती पर इन्सान का स्थान समस्त जीव–जंतुओं में श्रेष्ठतम है, इसलिए अल्लाह के बनाये हुए इसी नियम के अन्तर्गत उसे भी अपने भोजन के लिए दूसरों जानवरों का उपयोग करने का अधिकार पहुँचता है। यह उनके अधिकार का हनन नहीं बल्कि अपने अधिकार का इस्तेमाल और उन जानवरों का सही इस्तेमाल है। यह समस्त जीव–जन्तु इंसानों के लिए ही बने हैं और इंसान अल्लाह की निश्चित की हुई सीमाओं के अन्दर इनका इस्तेमाल कर सकता है।

समापन

इस प्रकार यह बात आसानी से समझी जा सकती है की कुरबानी एक उपासना है जो इंसानों और उनके पैदा करने वाले मालिक के बीच कुर्ब (निकटता) पैदा करने का माध्यम है। उसका यह आशय नहीं होता की कुरबानी का खून और गोश्त अल्लाह तक पहुंचाए, बल्कि वह तो अपने हृदय की भावनाओं को उसके सामने प्रस्तुत करता है। कुरआन ने यह स्पष्ट भी कर दिया है की अल्लाह को खून और गोश्त नहीं बल्कि तुम्हारी धर्म–परायणता पहुँचती है:

"न उनके मांस अल्लाह को पहुँचते हैं और न उनके रक्त। किन्तु उसे तुम्हारा तक़वा (धर्मपरायणता) पहुँचता है।" (कुरआन 22:37)

यही धर्मपरायणता और ईशपरायणता है जो इस्लाम अपने अनुयायिओं में पैदा करना चाहता है और ईद–उल–अज़्हा की कुरबानी इस भावना को पैदा करने में एक सक्षम रोल निभाती आ रही है और आगे भी निभाती रहेगी।